इकाई 14 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : जयशंकर प्रसाद

इकाई रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

14.3 सारांश

14.4 उपयोगी पुस्तकें

14.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- जयशंकर प्रसाद की चयनित कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगे;
- जयशंकर प्रसाद की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जान सकेंगे;
- जयशंकर प्रसाद की काव्य-भाषा को समझने का प्रयास करेंगे और
- जयशंकर प्रसाद की शब्द-योजना काव्य सौश्ठव और शब्दावली को जान सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, 1889 ई को बनारस में हुआ था। उनके पूर्वज कानपुर के रहनेवाले थे जिन्होंने व्यवसाय को ध्यान में रखकर बनारस में रहने का निर्णय लिया था। जयशंकर प्रसाद की औपचारिक शिक्षा केवल छठी-सातवीं कक्षा तक बनारस के क्वींस कॉलेज में हुई थी। केवल 48 साल की उम्र में 15 नवम्बर, 1937 ई को प्रसाद जी की मृत्यु हो गयी थी। उन्होंने अल्पायु के बावजूद विपुल साहित्य रचा था। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है -

काव्य-कृतियाँ : चित्राधार (1918/1928), कानन-कुसुम (1913/1929), प्रेमपथिक (ब्रजभाषा-1909), प्रेमपथिक (खड़ी बोली हिंदी-1914), महाराणा का महत्त्व (1914), झरना (1918), आँसू (1925/1933), लहर (1935), कामायनी (1936)

नाट्य-कृतियाँ : उर्वशी (1909), सज्जन (1910), वभ्रुवाहन (1911), कल्याणी परिणय (1912), करुणालय (1912), प्रायश्चित (1914), राज्यश्री (1915), विशाख (1921), अजातशत्रु (1922), जन्मेजय का नाग-यज्ञ (1924), कामना (1927), एक घूँट (1929), स्कन्दगुप्त (1928), चन्द्रगुप्त (1931), ध्रुव स्वामिनी (1933), अग्निमित्र (अपूर्ण)

कहानी-संग्रह : छाया (1912/1918), प्रतिध्वनि (1925), आकाशदीप (1929), आँधी (1931), इन्द्रजाल (1936),

कथा प्रबन्ध : ब्रह्मर्षि (1910), पंचायत (1910)

उपन्यास : कंकाल(1930), तितली(1934), इरावती (अपूर्ण, मरणोपरांत 1940 में प्रकाशित)

निबन्ध : काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध (मरणोपरांत 1939 में प्रकाशित)

जयशंकर प्रसाद छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन-काल का अधिकांश छायावाद (1918-1936) के दौर से जुड़ा था। निराला, पन्त और महादेवी की तुलना में जयशंकर प्रसाद ने, परिमाण की दृष्टि से, सबसे ज्यादा छायावादी साहित्य की रचना की थी। उन्होंने कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास और आलोचना में उच्च कोटि की रचनाएँ दीं।

प्रसादजी की कविताएँ मूलतः रोमानी हैं। छायावाद की प्रायः सभी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए उनकी कविताएँ 'कामायनी' में शैव-दर्शन के आनंदवाद तक भी पहुँचती हैं। 'कामायनी' को न केवल छायावाद में, बल्कि हिंदी कविता के इतिहास में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों की रचना की, मगर इन नाटकों में अपने वर्तमान को व्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता मौजूद है। उन्होंने 'तितली' और 'कंकाल' नामक उपन्यासों में यथार्थ-चित्रण का ध्यान रखा है। उनके उपन्यास रोमानियत के बजाय यथार्थ की तरफ उन्मुख हैं। प्रसाद की कहानियों में रोमानियत और यथार्थ - दोनों रूप मिलते हैं। उनके आलोचनात्मक आलेखों में प्रायः साहित्य की अवधारणात्मक समझ को सुलझाने का प्रयास दिखाई पड़ता है।

14.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

बीती विभावरी जाग री
अम्बर पनघट में डुबो रही-
तारा-घट ऊषा नागरी ।
खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई-
मधु मुकुल नवल रस गागरी।
अधरों में राग अमंद पिये,
अलकों में मलयज बंद किये,
तू अब तक सोई है आली।
आँखों में भरे विहाग री।

सन्दर्भ और प्रसंग

'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता 'लहर' काव्य-संग्रह में संगृहीत है। 'लहर' का पहला प्रकाशन 1935 ई- में हुआ था। यह कविता एक जागरण गीत है। एक युवती अपनी सोई हुई सखी को सुबह-सुबह जगा रही है। इसमें सामान्य जागरण-भाव के साथ वियोग का शृंगारिक प्रसंग भी जुड़ा हुआ है, जो कविता की अंतिम पंक्तियों में स्पष्ट होता है।

व्याख्या

युवती अपनी सोई हुई सखी से कह रही है कि हे सखि। रात बीत चुकी है अब तुम जाग जाओ। वह प्रेरित करती हुई आगे कहती है कि देखो पूरी प्रकृति अब क्रमशः जागरण की ओर बढ़ रही है। आकाश के तारे धीरे-धीरे डूब रहे हैं। ऐसा लग रहा है कि ऊषा (सुबह) एक समझदार स्त्री की तरह है जो खूब सबेरे पनघट पर पानी भरने के लिए आ गयी है। वह स्त्री अपने घड़ों को पनघट पर डुबो कर पानी भर रही है। यूँ कहें कि अम्बर-रूपी पनघट पर, तारे-रूपी घड़ों को, ऊषा-रूपी गृह-कार्य-दक्ष स्त्री डुबो रही है।

देखो सखि। पक्षी अपने झुण्ड-सहित कलरव कर रहे हैं। वे कुल-कुल की आवाज के साथ जाग रहे हैं। इसके अलावा पौधों के लाल-लाल नए पत्ते ऐसे झूम रहे हैं मानो वे हवा में लहराते आँचल हों। इस तरह पक्षी और पौधे अपनी जागृति का पूर्ण संकेत दे रहे हैं। मगर तुम अब तक सोई हुई हो। रात बीत चुकी है, अब जाग जाओ।

कल जिस कोमल लता को तुमने देखा था, वह आज कली से सजी हुई दिखाई पड़ रही है। इस लतिका में लगी हुई मधुर-मोहक कली ऐसी मालूम पड़ रही है, मानो रस से भरी हुई एक प्यारी-सी नयी गगरी हो। सखि! देखो प्रकृति ने कितना नया रूप धारण कर लिया है, मगर तुम अब तक सोई हुई हो।

इतना कहने के बाद युवती अपनी सोई हुई सखि के निजी प्रसंग का सांकेतिक उल्लेख करती है। वह चाहती है कि उसकी सखी का वियोग-जनित दुःख दूर हो। वह जागे और प्रकृति के उल्लास से जुड़कर अपने व्यक्तिगत दुःख को हल्का कर ले। वह कहती है कि सखि। रात में तुम्हारे होंठों पर जो लाली लगी थी, वह अभी तक जस की तस है। रात में तुमने अपने लम्बे बालों में जो सुगंधि लगाई थी और बालों को सजाया था, वह अभी तक वैसे ही है। जबकि पूरी रात बीत चुकी है। सखि। मैं सब समझ रही हूँ। तुम्हारी आँखों में विहाग का राग भरा हुआ दिखाई पड़ रहा है। यह राग बता रहा है कि तुम अपने प्रिय की प्रतीक्षा में रात के तीसरे प्रहर (रात 12 से 3 बजे) तक जगती रही हो। मैं जान गई हूँ कि प्रतीक्षा में व्याकुल होकर तुमने रात के तीसरे प्रहर में गाया जानेवाला विहाग का राग गाया होगा। और उसी राग का भाव अपनी आँखों में बसाए हुए निराश होकर तुम सो गयी होगी।

सखि! अब जाग जाओ। रात बीत चुकी है। देखो, पूरी प्रकृति जाग चुकी है। रात की शिथिलता और खुमारी को छोड़कर अब सब लोग जाग रहे हैं, तुम्हें भी जाग जाना चाहिए।

काव्य सौष्ठव/विशेष

यह जागरण गीत है। स्वतंत्रता आन्दोलन में व्याप्त जागृति के भाव को इसमें प्रकृति के माध्यम से व्यक्त किया गया है। यह गीत अंत में वियोग का भाव समेटे हुए है।

इसकी टेक की पंक्ति 'बीती विभावरी जाग री' में 15 मात्राएँ हैं। इस पंक्ति की तुकबंदी जिन पंक्तियों से हुई है, उनमें भी 15-15 मात्राएँ हैं। जैसे - तारा-घट ऊषा नागरी, मधु मुकुल नवल रस गागरी, आँखों में भरे विहाग री। शेष पंक्तियों में 16-16 मात्राएँ हैं।

कठिन शब्द

1. विभावरी- रात 2. अम्बर पनघट - आकाश मानो पनघट की तरह है 3. तारा-घट - सितारे मानो घड़े की तरह हैं 4. ऊषा नागरी - सुबह एक कुशल स्त्री की तरह है 5. खग-कुल - चिड़ियों का झुण्ड या समूह 6. कुल-कुल - चिड़ियों की सामूहिक आवाज के लिए प्रयुक्त शब्द 7. किसलय - नए पत्ते, पल्लव 8. अंचल - आँचल, दुपट्टा, चुनरी 9. लतिका - लता का अत्यंत कोमल रूप 10. मधु मुकुल - सुगंध से भरी कली 11. नवल रस - आस्वाद की ताजगी 12. गागरी - गगरा (घड़ा) का छोटा रूप 13. राग - रंग 14. अमंद - जिसकी चमक बनी हुई हो 15. अलकों - स्त्री के लम्बे बाल 16. मलयज - सुगंधि 17. आली - सखी 18. विहाग - रात्रि के तीसरे प्रहर (रात 12 से 3) में गाया जानेवाला वियोग का राग।

यह कविता मानवीकरण की सुंदरता से युक्त है। प्रकृति का भरपूर मानवीकरण छायावाद की एक प्रमुख विशेषता है।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें:

1. नायिका को जगाती हुई सखी तारों के बारे में क्या बता रही है?

.....

.....

.....

.....

2. 'बीती विभावरी जाग री' एक जागरण गीत क्यों है?

.....

.....

.....

.....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) झरना ख) लहर ग) आँसू घ) कामायनी

ii. 'बीती विभावरी जाग री' किस प्रकार का गीत है?

क) जागरण गीत ख) प्रयाण गीत ग) प्रार्थना घ) लोकगीत

iii. 'अंबर-पनघट' में कौन-सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'विहाग' का क्या अर्थ है?

क) सुबह ख) पक्षी ग) आकाश घ) एक राग का नाम

दो

ले चल वहाँ भुलावा देकर

ले चल वहाँ भुलावा देकर,
मेरे नाविक धीरे-धीरे ।

जिस निर्जन में सागर लहरी,
अम्बर के कानों में गहरी-
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे।

जहाँ साँझ-सी जीवन छाया,
ढीले अपनी कोमल काया,
नील नयन से ढुलकाती हो,
ताराओं की पाँति घनी रे।

जिस गंभीर मधुर छाया में-
विश्व चित्रपट चल माया में-
विभुता विभु-सी पड़े दिखाई
दुख-सुख वाली, सत्य बनी रे।

श्रम विश्राम क्षितिज वेला से-
जहाँ सृजन करते मेला से-
अमर जागरण उषा नयन से-
बिखराती हो ज्योति घनी रे।

सन्दर्भ और प्रसंग

प्रस्तुत कविता : गीत 'लहर' (1935ई-) काव्य-संग्रह में संगृहीत है। इस गीत की रचना 19 दिसम्बर 1931 ई- को जगन्नाथपुरी में हुई थी। इसका प्रथम प्रकाशन 11 फरवरी, 1932 ई- को साप्ताहिक पत्र 'जागरण' (बनारस) में हुआ था। जयशंकर प्रसाद की यह कविता 'पलायनवादी' होने के आरोप से जुड़ी रही है। इस कविता में प्रसाद नाविक (नियति, प्रारब्ध आदि के अर्थ में) को सम्बोधित करके कह रहे हैं कि मुझे एक ऐसी जगह पर ले चलो जहाँ सांसारिक झगड़े न हों। जहाँ मैं प्रकृति के मूल रूप को अपनी आँखों से देख सकूँ, अपने कानों से सुन सकूँ और अपने हृदय की गहराइयों से महसूस कर सकूँ। इस कविता में 'वहाँ' से तात्पर्य वैसी दुनिया से है, जहाँ मनुष्य के संघर्षमय माहौल को स्थगित किया जा सके।

एक तरह से प्रसाद का यह कल्पित लोक है, जहाँ प्रकृति अपने अनुभूतिमय रूप में उपस्थित है और मनुष्य का हस्तक्षेप बिल्कुल नहीं है।

व्याख्या

जयशंकर प्रसाद इस कविता में एक ऐसे लोक की कल्पना करते हैं, जहाँ धरती का कोलाहल बिल्कुल न हो और प्रकृति अपने मूल रूप में दिखाई पड़ रही हो। प्रकृति का यह रूप हमारी अनुभूतियों को विस्तार देता हो, ताकि हम अपने स्वाभाविक रूप के नजदीक पहुँच सकें। मगर, यह जगह होगी कहाँ? प्रसाद ने वह जगह तो ठीक-ठीक नहीं बतायी है, मगर उस जगह के लक्षणों के बारे में बताया है और नाविक से आत्मीयतापूर्वक कहा कि उस जगह पर ले चलो। यह नाविक कौन है? प्रसाद उससे अपनाव प्रकट करते हुए कहते हैं- 'मेरे नाविक।'। छायावाद की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए प्रायः यही निष्कर्ष निकाला गया है कि यह नाविक हम सब

कठिन शब्द

1.नाविक - नियति भाग्य तकदीर 2. सागर लहरी - समुद्र की लहरें उन्मुक्त और कोमल भावनाएँ। 3.गहरी - गम्भीर 4. अवनी - धरती, संसार 5. ढीले - सहज और निश्चेष्ट हो जाना 6.नील नयन- नीला आकाश 7. पाँति - पंक्ति, लड़ी 8. विश्व चित्रपट - यह सृष्टि चित्रों के संग्रह (अल्बम) की तरह है 9. विभुता - प्रभुता 10 विराटता, व्यापकता 11. विभु-सी- प्रभु के समान, विराट के समान 13. वेला - तट, किनारा, अंतिम छोर।

की 'नियति' है या 'प्रारब्ध' है। इसे हम 'भाग्य' या 'तकदीर' भी कह सकते हैं। प्रसाद 'नियतिवादी' भी कहे गए हैं। सारांश यह कि प्रसाद चाहते हैं कि काश मैं संयोग से (नियति के सहारे) ऐसी जगह पहुँच पाता, जहाँ धरती के संघर्ष नहीं होते और प्रकृति अपने मूल रूप में अनुभूतिमयी बनकर हमारे सामने होती।

प्रसाद कहते हैं कि हे मेरे नाविक। मुझे भुलावा देकर धीरे-धीरे 'वहाँ' ले चलो। मुझसे बताने की जरूरत नहीं है कि उस जगह पर तुम किस रास्ते से ले कर चलोगे। मुझे अनजान ही रहने दो। मैं इस उलझन/बहस में भी पड़ना नहीं चाहता कि कौन-सा रास्ता मुझे

'वहाँ' पहुँचा पाएगा। तुम सहज भाव से धीमे-धीमे ले चलते हुए उस जगह तक पहुँचा दो। वह मेरी अभीष्ट जगह है। मैं वहाँ पहुँचकर उन तमाम आवरणों को फेंक देना चाहता हूँ, जो धरती के संघर्षों के कारण हमारे ऊपर चढ़ जाते हैं।

अगली पंक्तियों में वे उस जगह के लक्षणों के बारे में बताते हैं। उस जगह की पहचान बताते हुए वे कहते हैं कि मुझे उस निर्जन जगह पर ले चलो, जहाँ सागर की लहरी, अंबर के कानों में निश्छल प्रेम की गहरी कथा कहती हो। और वहाँ पर धरती का कोलाहल बिल्कुल न हो। धरती के संघर्षों से दूर अपने प्राकृतिक स्वभाव में प्रेम को देखने की अभिलाषा कवि ने प्रकट की है।

मैं उस जगह पर ढलती हुई शाम के रूप को देखना चाहता हूँ, और महसूस करना चाहता हूँ कि शाम में, कैसे जीवन अपनी कोमल काया को विश्राम के लिए ढीला छोड़ देता है। जो जीवन दिन भर सक्रिय रहता है, वह शाम में विश्राम के लिए अपने शरीर को निष्क्रिय कर देता है। मैं इस दृश्य को देखना चाहता हूँ। मैं उस गहराती हुई शाम में तारों की पंक्तियों को निकलते हुए देखना चाहता हूँ और महसूस करना चाहता हूँ कि ये तारे 'जीवन छाया' के ढुलकते आँसुओं की तरह हैं। प्रकृति के ये दृश्य जीवन की छाया (प्रतिरूप/प्रतीक) के रूप में मेरे सामने घटित होते दिखाई पड़ें, ताकि मैं जान सकूँ कि मनुष्य का जीवन अपने प्राकृतिक रूप में किस तरह का है। यह भी समझ सकूँ की सांसारिक संघर्षों ने जीवन को कितना अस्वाभाविक बना दिया है।

यह सृष्टि विराट और गम्भीर है। वह अपनी मधुरता और गम्भीरता की छाया में अनेक चित्रों को समेटे हुए है। ये चित्र स्थिर चित्रों की तरह नहीं हैं, बल्कि गतिशील हैं। ये चित्र वास्तविक होते हुए भी चंचल माया की तरह अनेक रूप धारण करने की क्षमता रखते हैं। मैं सृष्टि के चित्रों के बीच प्रकृति की विराटता के प्रत्यक्ष रूप को देखना चाहता हूँ। ठीक वैसे ही, जैसे विराट को सीधे देखकर उसकी विराटता को महसूस करना। विभु की विभुता को अप्रत्यक्ष रूप से महसूस करने के कई उपाय हैं। हम लघु रूपों में भी विराटता को महसूस कर सकते हैं। मगर यह सब अप्रत्यक्ष ही रहता है। मैं प्रत्यक्ष रूप से विराट को देखकर उसकी विराटता को जानना चाहता हूँ। यह विराट सुख से बना है या दुःख से? कवि का ख्याल है कि यह विराट सुख-दुःख के सापेक्ष नहीं होता है। वह सत्य की तरह होता है, वह आनन्द की तरह होता है, वह रस की तरह होता है। रामचंद्र गुणचंद्र ने रस के बारे में लिखा है, 'सुखदुखात्मको रसः'। अर्थात् रस सुखात्मक भी होता है और दुखात्मक भी। रस मूलतः आनन्द है, सुख-दुःख की परिधि को तोड़कर मिलनेवाली तन्मयता और तल्लीनता। कवि उस विराट को देखना चाहता है जिसमें सुख भी है और दुःख भी, मगर उसकी कसौटी है - सत्य।

हे नाविक। मुझे उस जगह पर पहुँचकर एक और दृश्य देखना और महसूस करना है। मैं रात के उस रूप को देखना चाहता हूँ जिसमें श्रम से थकी सृष्टि विश्राम कर रही हो। श्रम-विश्राम के मिलन-बिंदु की तरह बनी हुई उस रात को देखना चाहता हूँ। रात मानो ढल रही हो और क्षितिज के तट पर प्रभात अँगड़ाइयाँ ले रहा हो। रात के विश्राम के बाद पुनः सृष्टि के विभिन्न घटक सृजन के कामों में लगते हुए ऐसे दिखाई पड़ें मानो सुबह होते ही सृजन का मेला-सा लग गया हो। मैं सुबह के उस दृश्य को देखना चाहता हूँ कि कैसे उषा की आँखों से बरसती अखंड ज्योति, अमरण जागरण का, संदेश लेकर आती है। हे नाविक। मुझे तुम ऐसी ही जगह पर ले चलो।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह पलायन का गीत नहीं है।
- इसमें जीवन की आसक्ति से मुक्त होकर जीवन को समझने की कामना है।
- सांसारिक संघर्षों ने जीवन को वेदनामय बना दिया है।

- कवि का विचार है कि यह जीवन अपने मूल रूप में आनन्दमूलक है।
- इसमें कवि की आकांक्षाओं का संसार व्यक्त हुआ है।
- इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में 16-16 मात्राएँ हैं। पहली पंक्ति को छोड़कर प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है।

बोध प्रश्न-2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' से क्या अभिप्राय है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता पर 'पलायनवाद' का आरोप किस हद तक सही है?

   .....

   .....

   .....

   .....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चन्हित कीजिए।

   i. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' शीर्षक कविता पर किस तरह की कविता होने के आरोप लगे हैं ?

      क) अध्यात्मवादी ख) रहस्यवादी ग) पलायनवादी घ) हालावादी

   ii. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' शब्द से क्या आशय है ?

      क) नाव चलानेवाला ख) नियति ग) प्रकृति घ) प्रेमिका

   iii. सागर की लहरी, अंबर के कानों में, क्या कह रही हो ?

      क) रहस्यात्मक बातें ख) उलाहना भरी बातें
      ग) आध्यात्मिक कथा घ) निश्छल प्रेम-कथा

   iv. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता का प्रथम प्रकाशन कब हुआ था?

      क) 1932 ख) 1935 ग) 1933 घ) 1934

तीन

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पन्थ है - बढ़े चलो, बढ़े चलो।
असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ, विकीर्ण दिव्य दाह-सी
सपूत मातृभूमि के रुको न शूर साहसी।
अराति सैन्य सिन्धु में - सुबाड़वाग्नि से जलो।
प्रवीर हो जयी बनो- बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

सन्दर्भ और प्रसंग

यह कविता 'चन्द्रगुप्त' (1931) नाटक के चतुर्थ अंक के षष्ठ दृश्य से ली गयी है। तक्षशिला के राजकुमार आम्भीक के द्वारा विदेशी आक्रान्ता सिकंदर को समर्थन देने के कारण जनता में असंतोष उत्पन्न हुआ। आम्भीक की बहन अलका जनता को नेतृत्व देते हुए यह गीत गाती है। वह चाहती है कि तक्षशिला के लोग एकजुट होकर विदेशी आक्रमणकारियों का मुकाबला करे। इसके लिए वह अपने भाई की अवसरवादी राजनीति का विरोध करती है और जनता से आह्वान करती है कि विदेशी आक्रमण का मुकाबला करके अपने गौरव को बढाएँ।

व्याख्या

अलका तक्षशिला के नागरिकों को सम्बोधित करते हुए कहती है कि हिमालय की ऊँची चोटियों से मानो स्वतंत्रता की पुकार आ रही है। ऐसा लगता है मानो अपनी ही प्रभा से उज्ज्वल विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती स्वतंत्रता की पुकार लगा रही हैं। अविद्या को दूर कर विद्या की चेतना फैलानेवाली सरस्वती प्रबुद्धता और शुद्धता का प्रतीक हैं। उनके आह्वान को सुनो। वे तुमसे कुछ कह रही हैं।

कठिन शब्द

1. हिमाद्रि - हिमालय 2. हिम़अद्रि (पर्वत) 3. तुंग - ऊँचीं 4. शृंग - चोटी 5. प्रबुद्ध - बोध और विद्या से युक्त 6. शुद्ध - निर्मल 7. भारती - विद्या की चेतना 8. अविद्या का नाश करनेवाली चेतना, देवी सरस्वती 9. स्वयंप्रभा - अपनी विद्या के आलोक से युक्त 10.समुज्ज्वला - उज्ज्वलता से परिपूर्ण 11. स्वतंत्रता पुकारती - स्वतंत्रता की पुकार लगा रही है वह सरस्वती 12.अमर्त्य - अमर 13. वीरपुत्र - बहादुर संतान हो तुम 14. -दृढ़-प्रतिज्ञा - जो अपने इरादे पर अडिग हो 15. प्रशस्त - विस्तृत और भविष्यगामी 16. पुण्य पन्थ - अच्छे कामों का रास्ता 17.कीर्ति-रश्मियाँ - यश की किरणें 18.विकीर्ण - फैली हुई 19. दिव्य दाह-सी - अलौकिक अग्नि के समान 20. अराति - शत्रु 21. सैन्य सिन्धु - सेना-रूपी समुद्र 22. सुबाड़वाग्नि - समुद्र में जलनेवाली कल्पित आग 13. प्रवीर - अत्यंत वीर

विद्या की चेतना का प्रतीक वह भारती तुमसे कह रही हैं कि तुम अमर वीरों की संतान हो और स्वयं भी अमरत्व के गुणों से विभूषित हो। देश की रक्षा के लिए दृढ़तापूर्वक प्रतिज्ञा लेने के बारे में सोच लो यह पुण्य का रास्ता है और पुण्य का रास्ता हमेशा विस्तृत होता है। इसलिए इस रास्ते पर तुम बढ़ते चलो।

तुम्हारे पूर्वजों के अनंत यश हैं। उनके यश असंख्य किरणों की तरह फैले हैं। ऐसा लगता है मानो अलौकिक अग्नि चारों तरफ फैली हुई है। तुम अपनी मातृभूमि की सुयोग्य संतान हो। तुम वीर और साहसी हो, इसलिए अपने रास्ते पर बिना रुके चलते रहो। यद्यपि शत्रुओं की सेना समुद्र की तरह विराट है, मगर तुम समुद्री आग की तरह जल उठो और शत्रु-सेना का नाश करो। तुम श्रेष्ठ वीर हो, विजयी बनो, अपने रास्ते पर बढ़ते चलो।

अलका चाहती है कि उसकी तक्षशिला के नागरिक अपने राजा की गलत राजनीति में साथ न दें। वे तक्षशिला पर लगनेवाले कलंक को धो डालें। वे इतिहास में देशभक्त के रूप में दर्ज हों, भले उन्हें राजद्रोह करना पड़े।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह प्रयाण या आह्वान गीत है।
- राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में लिखी गयी यह कविता राजनीतिक अर्थ भी रखती है।
- देश-प्रेम सर्वोपरि है, भले ही उसके लिए राजद्रोह करना पड़े।
- इसकी प्रत्येक पंक्ति में 24-24 मात्राएँ हैं। ह्रस्व-दीर्घ-ह्रस्व-दीर्घ के क्रम में सुगठित इन पंक्तियों में 'अनंगशेखर' छन्द है। प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है। इसी छन्द में रावण द्वारा लिखित कहा जानेवाला 'शिवताण्डवस्तोत्र' है - 'जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितास्थले—जिसे 'पंच चामर' छंद भी कहते हैं।
- इसकी धुन परेड की धुन की तरह है।

बोध प्रश्न-3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से....' किस प्रकार का गीत है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से....' कविता के छन्द-विधान के बारे में बताएँ?

   .....

   .....

   .....

   .....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

   i 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से.....' शीर्षक कविता किस पुस्तक में शामिल है?

   क) झरना ख) लहर ग) स्कन्दगुप्त घ) चन्द्रगुप्त

   ii 'अराति' का क्या अर्थ है?

   क) आर्त्तवाणी ख) विशाल ग) शत्रु घ) शूरवीर

   iii. 'चन्द्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन-वर्ष बताएँ?

   क) 1931 ख) 1925 ग) 1932 घ) 1936

   iv. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से...' गीत गानेवाले पात्र का नाम बताएँ ?

   क) मालविका ख) सुवासिनी ग) कॉर्नेलिया घ) अलका

कर गयी प्लावित तन-मन सारा (झरना)

मधुर है स्रोत मधुर है लहरी
न है उत्पात, छटा है छहरी
मनोहर झरना
कठिन गिरि कहाँ विदारित करना
बात कुछ छिपी हुई है गहरी
मधुर है स्रोत मधुर है लहरी
कल्पनातीत काल की घटना
हृदय को लगी अचानक रटना
देखकर झरना
प्रथम वर्षा से इसका भरना
स्मरण ही रहा शैल का काटना
कल्पनातीत काल की घटना
कर गई प्लावित तन-मन सारा
एक दिन तव अपांग की धारा
हृदय से झरना
बह चला, जैसे -गजल ढरना
प्रणय बन्या ने किया पसारा
कर गई प्लावित तन-मन सारा
प्रेम की पवित्र परछाईं में
लालसा हरित विटप आईं में
बह चला झरना
तापमय जीवन शीतल करना
सत्य यह तेरी सुघराई में
प्रेम की पवित्र परछाईं में

सन्दर्भ और प्रसंग

'कर गई प्लावित तन-मन सारा' कविता जयशंकर प्रसाद के काव्य-संग्रह 'झरना' (1918) में संगृहीत है।

इस कविता को 'झरना' शीर्षक से संगृहीत किया गया है। इसके लेखन और प्रथम प्रकाशन-वर्ष की जानकारी 'जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली' में नहीं दी गयी है। 'झरना' में संगृहीत कविताएँ, जयशंकर प्रसाद की प्रारम्भिक कविताएँ (खड़ी बोली हिंदी में) हैं। इस कविता में 'झरना' को विषय बनाया गया है। उसकी मधुरता, स्वच्छंदता और कल्पना को जन्म देने की क्षमता के बारे में बात करता हुआ कवि कहता है कि तुममें मन को शीतलता प्रदान करने की क्षमता है।

व्याख्या

जयशंकर प्रसाद ने प्रस्तुत कविता में 'झरना' को विषय बनाया है। वे कहते हैं कि झरना एक मधुर जलस्रोत की तरह है। इसमें प्रवाहित होनेवाली जल की तरंगें मधुर मालूम पड़ती हैं। इसके प्रवाह में किसी तरह का उत्पात नहीं है। इसकी छहराती जल-बूँदों में सौन्दर्य की अद्‌भुत छटाएँ हैं। झरना मनोहर मालूम पड़ता है।

अपनी कोमलता के बावजूद, कठोर पर्वत को चीरकर, यह झरना निकल पड़ता है। इसमें जरूर कोई गहरी-गंभीर बात छिपी हुई है, क्योंकि कहाँ कोमल-मधुर झरना और कहाँ कठोर पर्वत। कठोर को भेदता हुआ कोमल। पर्वत को चीरनेवाली घटना कब घटित हुई होगी? यह घटना सम्भवतः उस कालखंड में हुई होगी, जो हमारी कल्पना की सीमा से

परे है। झरने को देखकर हमारे मन में मानो यह बात बार-बार याद आने लगी कि यह सब कब हुआ होगा? जब कोमल ने कठोर को चीर दिया होगा।

यह झरना पहली बार कब बारिश से भरा-पूरा हुआ होगा? पता नहीं। फिर इसने चट्टानों को धीरे-धीरे काट डाला होगा। अब तो यह सब झरने की स्मृति-मात्र में रह गया होगा। यह घटना कल्पना की सीमा से परे हो गए किसी कल-क्रम में घटित हुई होगी।

इसके बाद कवि झरना के बहाने अपनी प्रिया को याद करने लगता है। झरने के रूप-विन्यास, ध्वनि, गति आदि के प्रभाव में आकर वह अपने व्यक्तिगत प्रेम की स्मृति की ओर उन्मुख हो जाता है। वह कहता है कि प्रेम की पहली बारिश से मेरे हृदय-रूपी झरने का भर जाना, अनेक तरह की कठोर कठिनाइयों का प्रेम के प्रवाह में कट जाना आदि - आज मेरी स्मृति में है। तुम्हारी आँखों के कोरकों में छलक आई आँसू की धारा मेरे तन-मन को सराबोर कर गयी थी। मेरा हृदय मानो झरने की तरह फूट-फूटकर बह चला था।

मैं अपने आँसुओं के प्रवाह के साथ बह चला। प्रेम की बाढ़ ने मानो मेरे तन-मन को सराबोर कर दिया था। मैं प्रेम की पवित्र छाया में था और मेरे हृदय का झरना मानो प्रेम की लालसा के हरित वन में प्रवाहित हो चला।

झरना और झरने के कारण आई प्रेम की स्मृति ने तापमय जीवन को शीतलता दी। झरने की सुंदर और सुगढ़ छवि में एक तरह के सत्य का दर्शन हुआ और उसमें प्रेम की पवित्र परछाईं भी दिखाई पड़ी।

काव्य सौष्ठव / विशेष

यह कविता छायावाद की स्वच्छंदता को 'झरना' के प्रतीक से व्यक्त करती है। अंग्रेजी और बांगला की रोमानी कविताओं में भी 'झरना' के प्रतीक को इसी अर्थ में अपनाया गया है।

मनुष्य के भाव को प्रकृति में देखना और प्रकृति के विविध रूपों में मनुष्य के भाव को देखना - यह क्रम छायावादी कविता की एक पहचान है। इस कविता में प्रकृति को देखते हुए मानवीय भावों तक पहुँचा गया है और पुनः प्रकृति की ओर लौटते हुए मानवीय भावों को व्यक्त किया गया है।

कठिन शब्द

प्लावित - सराबोर कर देना, पूरी तरह नहला देना, छहरी - छिटक-छिटक कर शोभा का उत्पन्न होना, गिरि - पर्वत, विदारित - चीरना, पत्थरों को चीरते हुए झरने का निकलना, कल्पनातीत - कल्पना की सीमा में जो न समा सके, रटना - रट लग जाना, किसी बात की आवृत्ति मन ही मन होने लगना, प्रथम वर्षा - पहली बारिश में, प्रेम की पहली अनुभूति में, शैल का कटना - चट्टानों को काटते हुए झरनों का निकलना, अपांग - आँखों का किनारा या कोर, -गजल - आँसू, वन्या - बाढ़, जल प्लावन, सुघराई - सुंदर और सुडौल।

इस कविता में 17 और 9 मात्राओं की पंक्तियाँ हैं। टेक की तरह आई हुई चार पंक्तियों में 9-9 मात्राएँ हैं और शेष 20 पंक्तियों में 17-17 मात्राएँ हैं। प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है।

बोध प्रश्न-4

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'झरना' की प्रतीकात्मकता को स्पष्ट करें?

.....

.....

.....

2. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'झरना' का प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1936 ख) 1925 ग) 1935 घ) 1918

ii. 'अपांग' का क्या अर्थ है?

क) विकलांग ख) सौन्दर्य ग) आँखों का किनारा घ) नेत्र गोलक iii. प्रणय वन्या' में कौन-सा अलंकार है ?

क) रूपक ख) उपमा ग) उत्प्रेक्षा घ) असंगति

iv. 'झरना' किस भाव का प्रतीक है ?

क) स्वच्छंदता ख) धार्मिकता ग) आनंद घ) पलायन

14.3 सारांश

इस इकाई में आपने छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की चार महत्वपूर्ण कविताओं का अध्ययन किया और उनके पाठ-विश्लेषण का ज्ञान प्राप्त किया। इन चारों कविताओं के अध्ययन का सार इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है-

- 'बीती विभावरी जाग री' सोयी हुई युवती को उसकी सखी खूब सबेरे जगा रही है और प्रकृति के जागरण का हवाला दे रही है। अंत में उसके व्यक्तिगत वियोग-भाव के प्रति सहानुभूति प्रकट कर रही है। यह कविता एक जागरण गीत है।
- 'ले चल वहां भुलवा देकर' यह कविता जीवन के प्राकृतिक रूप को समझने का आग्रह करती है। सांसारिक संघर्ष, आकर्षण, भ्रम और सम्बन्ध के कारण हम जीवन को छद्म दृष्टियों से देखने को बाध्य हो जाते हैं। कवि ने एक ऐसी जगह की कल्पना की है जहाँ पहुँचकर जीवन को उसकी प्रकृति के साथ निर्भ्रांत होकर देखा जा सके।
- 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' से विदेशी आक्रान्ताओं के खिलाफ जनता को प्रेरित करनेवाला प्रयाणगीत है। अलका तक्षशिला के नागरिकों को देशभक्ति के लिए प्रेरित कर रही है और राजद्रोह को उचित बता रही है। इस गीत में आत्मगौरव भरने के भाव की प्रमुखता है।
- 'कर गयी प्लावित तन-मन सारा' कविता में झरना मधुर है, उसकी लहरें कोमल हैं। उसकी छिटकती बूँदों में सौन्दर्य का विलास है। मगर, उसने कठोर पर्वत को चीरकर अपना यह स्वरूप धारण किया है। उसे देखते हुए कवि अपने हृदय में फूटती प्रेम की धारा की अनुभूति करता है।

14.4 उपयोगी पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद - नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली
2. प्रसाद का काव्य - प्रेमशंकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली - स-- ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली
4- प्रसाद काव्य-कोश -कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

5. छायावादी काव्य-कोश - कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

14.5 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. नायिका को जगाती हुई सखी कह रही है कि ऊषा-रूपी स्त्री, तारे-रूपी घड़ों को, आकाश-रूपी पनघट में डुबो रही है। मतलब यह कि सुबह हो रही है और सितारे डूब रहे हैं। आकाश मानो पनघट है, सुबह मानो स्त्री है। वह स्त्री घड़े लेकर पनघट पर पानी भरने गयी है। वह एक-एक घड़े को पानी में डुबोती जा रही है। इस तरह वह बता रही है कि सुबह हो चुकी है, इसलिए हे सखि, तुम जाग जाओ!

2. 'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता में सोयी हुई नायिका को उसकी सखी जगा रही है। वह बता रही है कि प्रकृति के विभिन्न उपादानों में जागरण के संकेत दिखाई पड़ रहे हैं। तारे डूब रहे हैं और सुबह सक्रिय हो गयी है। पक्षी बोल रहे हैं। किसलय आँचल की तरह डोल रहे हैं। एक छोटी-सी लतिका में आज कली निकल आयी है। इस तरह प्रकृति के रोम-रोम में जागृति के संदेश बिखरे पड़े हैं और हे सखि! तुम अब तक सोयी हुई हो! तुम्हें जाग जाना चाहिए। यह कविता 1935 में लिखी गयी थी। स्वतंत्रता आन्दोलन के उस दौर में प्रकृति-परक और रूपकनुमा अनेक जागरण गीत लिखे गए थे। छायावाद के वैशिष्ट्य के अनुसार इनकी शैली प्रायः लाक्षणिक हुआ करती थी। इसी तरह की लाक्षणिक शैली में लिखा गया यह जागरण गीत भी है।

3. i) ख
   ii) क
   iii) ख
   iv) घ

बोध प्रश्न 2

1. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' शब्द से अभिप्राय है नियति का प्रसाद अपनी नियति से मानो कह रहे हैं कि मुझे तुम ऐसी जगह ले चलो जहाँ सांसारिक संघर्षों और आवरणों को किनारे कर मनुष्य के जीवन को समझने का अवसर मिले. इस संसार में जितने रास्ते दिखाई पड़ते हैं, वे सब के सब अन्य-अन्य प्रसंगों से आक्रांत हैं। मैं प्रकृति के निरावृत्त रूप में जीवन के रूप को देखना चाहता हूँ। इस काम में मेरी मदद शायद मेरी नियति ही कर सकती है। अपनी नियति को ही 'मेरे नाविक' का रूपक इस कविता में दिया गया है।

2. जयशंकर प्रसाद शैव दर्शन के आनंदवाद में विश्वास रखनेवाले कवि हैं। उन्होंने 'कामायनी' के अंत में भी आनंदवादी समाधान दिखाया है। इस कविता में वे एक ऐसी जगह पर जाने की आकांक्षा प्रकट करते हैं, जहाँ सांसारिक संघर्षों और आवरणों से मुक्त होकर प्रकृति और जीवन के निरावृत्त रूप को देखा जा सके! वे पहले परिच्छेद में कहते हैं कि मुझे उस निर्जन स्थान पर ले चलो जहाँ सागर की लहरें, अंबर के कानों में, निश्छल भाव से अपनी प्रेम-कथा कह रही हों! वहाँ किसी भी प्रकार का सांसारिक कोलाहल न हो! पूरी कविता में इसी भाव को पल्लवित किया गया है। अपने प्रारम्भिक रूप में यह कविता संसार से पलायन करती हुई भले मालूम पड़ती

है, मगर अंततः यह जीवन के मूल प्रश्नों पर ही विचार करती है। विकसित होती जाती सभ्यताओं में इतने सारे आवरण बनते जा रहे हैं कि जीवन के मूल को पहचानने में कठिनाई होने लगती है। यह कविता इसी मूल रूप के महत्त्व की याद दिला रही है। यह कविता छायावाद के यूटोपियाई संसार की तरह भी है। अतः इस कविता पर 'पलायनवाद' का आरोप लगाना पूरी तरह सही नहीं है।

3. i) ग

   ii) ख

   iii) घ

   iv) क

बोध प्रश्न 3

1. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' एक प्रयाण गीत है। तक्षशिला के राजकुमार आम्भीक ने विदेशी आक्रमणकारी सिकंदर से समझौता करके तात्कालिक लाभ उठाना चाहा। आम्भीक की बहन अलका ने उसके इस कदम का विरोध किया और तक्षशिला के नागरिकों से आह्वान किया कि वे इस निर्णय के खिलाफ बगावत करें। तक्षशिला के नागरिकों ने अलका का साथ दिया। अलका उद्‌बोधन के बाद यह गीत गाती है जिसमें आह्वान किया गया है कि तुम शूरवीर होय यशस्वी पूर्वजों की संतान हो! आज हिमालय की ऊँची चोटियों से भी यही पुकार आ रही है कि स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करो!

2. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' कविता में अनंगशेखर या 'पंच चामर' छन्द है। इस छन्द की विशेषता होती है कि इसमें ह्रस्व-दीर्घ का क्रम छंद के अंत तक चलता रहता है। इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में 24-24 मात्राएँ हैं और अंत में दीर्घ की मात्रा है। इसी छन्द में रावण द्वारा लिखित कहा जानेवाला 'शिवताण्डवस्तोत्र' है - 'जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितास्थले'। ह्रस्व-दीर्घ मात्राओं का क्रमशः उतार-चढ़ाव इस छन्द को नाद सौन्दर्य की अनुगूँज से भर देता है। इसकी धुन परेड की धुन की तरह है, जिससे लगता है कि सैनिकों के कदमताल के साथ यह छन्द गतिमान हो रहा हो!

3. i) घ

   ii) ग

   iii) क

   iv) घ

बोध प्रश्न 4

1. प्रस्तुत कविता में 'झरना' स्वच्छंदता का प्रतीक है। वह मधुर, सुंदर और कोमल है। मगर उसने कठोर पर्वत को चीरकर अपना यह स्वरूप प्राप्त किया है। उसे देखकर मन में स्वच्छंदता के भाव उत्पन्न होते हैं। यह प्रेरणा मिलती है कि पराधीनता चाहे कितनी भी कठोर हो, अपनी कोमलता के बावजूद उसका निराकरण किया जा सकता है।

2. i) घ

   ii) ग

   iii) क

   iv) क